International Journal of Recent Research and Review, Vol. XVI, Issue 4, December 2023
ISSN 2277 – 8322

पंडित दीनदयाल के 'एकात्म मानववाद' की विचारधारा की वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिता

शिल्पा जैन[1], डॉ. वेद प्रकाश शर्मा[2]
[1]शोधार्थी, [2]प्रोफेसर शिक्षा विभाग
महाराज विनायक ग्लोबल यूनिवर्सिटी जयपुर

पंडित दीनदयाल उपाध्याय (1916–1968) एक प्रमुख भारतीय विचारक, दार्शनिक, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, इतिहासकार और राजनीति शास्त्री थे जिन्होंने भारतीय राजनीतिक और सामाजिक चिंतन पर अमिट छाप छोड़ी। उनका जीवन और कार्य समकालीन भारतीय राजनीति और सामाजिक दर्शन को प्रभावित करते हैं, खासकर उनकी 'एकात्म मानववाद' की अवधारण के माध्यम से।

25 सितम्बर, 1916 को उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के नंगला चंद्रभान गांव में जन्म उपाध्याय का प्रारंभिक जीवन व्यक्तिगत त्रासदी और शैक्षणिक उत्कृष्टता से भरा रहा। कम उम्र में अनाथ होने के कारण उनका पालन–पोषण उनके मामा ने किया। आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद उपाध्याय ने अपनी पढ़ाई में उत्कृष्टता हासिल की और अपने पूरे शैक्षणिक जीवन में लगातार अपनी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

उपाध्याय की औपचारिक शिक्षा 1939 में सनातन धर्म कॉलेज, कानपुर से बी.ए. और 1941 में प्रयाग विश्वविद्यालय से वीटी (बैचलर ऑफ टीचिंग) की डिग्री के साथ पूरी हुई। उनकी शैक्षणिक योग्यता उनके सिविल सेवाओं के लिए चयन में स्पष्ट थी, जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया और इसके बजाय अपना जीवन सामाजिक और राजनीतिक कारणों के लिए समर्पित करने का विकल्प चुना।

1942 में उपाध्याय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में शामिल हो गए जो एक हिंदू राष्ट्रवादी संगठन है, जिसने राष्ट्रवादी विचारधारा के प्रति उनकी आजीवन प्रतिबद्धता की शुरुआत की। आर. एस.एस. के साथ उनके जुड़ाव ने उनके दार्शनिक और राजनीतिक सोच को गहराई से प्रभावित किया जिसने भारत के भविष्य के लिए उनके दृष्टिकोण को आकार दिया।

उपाध्याय के राजनीतिक जीवन में 1951 में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया जब वे भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्यों में से एक बन गए, जो वर्तमान भारतीय जनता पार्टी का पूर्ववर्ती है। उन्होंने 1951 से 1867 तक 15 वर्षों तक पार्टी के महासचिव के रूप में कार्य किया और इसकी विचारधारा और संगठनात्मक संरचना को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपाध्याय के दार्शनिक योगदान की आधारशिला उनकी "एकात्म मानववाद" की अवधारणा है, जिसे उन्होंने 1964 में व्याख्यानों की एक श्रृंखला में व्यक्त किया और बाद में 1965 में एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया। इस दर्शन ने भारत के लिए एक स्वदेशी राजनीतिक आर्थिक मॉडल पेश करने की कोशिश की, जिसमें पश्चिमी पूंजीवादी व्यक्तिवाद और मार्क्सवादी समाजवाद दोनों को खारिज कर दिया गया।

एकात्म मानववाद मानव विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता पर जोर देता है, जिसमें मानव अस्तित्व के भौतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक आयामों पर विचार किया जाता है। उपाध्याय ने तर्क दिया कि सामाजिक और राजनीतिक प्रणालियों का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति और समाज दोनों का एकीकृत विकास होना चाहिए। यह दर्शन पारंपरिक भारतीय विचारों को आधुनिक राजनीतिक और आर्थिक विचारों के साथ संश्लेषित करने का प्रयास करता है, जो

पूंजीवाद और साम्यवाद से अलग एक "तीसरा रास्ता" प्रस्तावित करता है।

एकात्म मानववाद एक दार्शनिक और राजनीतिक अवधारणा है जिसे पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने विकसित किया था, जो एक प्रमुख भारतीय विचारक और राजनीतिज्ञ थे। यह अवधारणा व्यक्ति के समग्र विकास पर जोर देती है, व्यक्ति को बड़े सामाजिक और ब्रह्माण्डीय व्यवस्था का एक अभिन्न अंग मानती है।

एकात्म मानववाद का मुख्य विचार यह है कि व्यक्ति की भलाई और पूर्णता आंतरिक रूप से समुदाय, राष्ट्र और व्यापक मानवता की भलाई से जुड़ी हुई है। यह व्यक्ति और सामूहिक के बीच के द्वंद्व को अस्वीकार करता है, और इसके बजाय व्यक्ति के हितों को बड़े सामाजिक और पारिस्थितिक तंत्र के हितों के साथ सामंजस्यपूर्ण एकीकरण की वकालत करता है।

एकात्म मानववाद एक व्यापक विश्वदृष्टि को समाहित करता है जो मानव अस्तित्व के आध्यात्मिक, नैतिक और भौतिक आयामों को एकीकृत करता है। यह आत्म–अनुशासन, सामाजिक जिम्मेदारी और पारंपरिक मूल्यों के प्रति सम्मान जैसे गुणों की खेती पर जोर देता है, साथ ही आर्थिक और तकनीकी प्रगति के महत्व को भी स्वीकार करता है।

शैक्षिक संदर्भ में, एकात्म मानववाद का सिद्धांत सीखने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की मांग करता है, जो व्यक्ति के बौद्धिक, शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं का पोषण करता है। यह दृष्टिकोण ज्ञान के अधिग्रहण, व्यावहारिक कौशल के विकास और नैतिक और सामाजिक मूल्यों की खेती के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करता है।

भारत में बेरोजगारी की लगातार चुनौती, खास तौर पर शिक्षित युवाओं के बीच, देश की शिक्षा प्रणाली और नौकरी बाजार की मांगों के बीच एक बुनियादी अलगाव को रेखांकित करती है। यह समस्या कथन इस शोध के केंद्र में महत्वपूर्ण मुद्दों को रेखांकित करता है, जो भारत में बेरोजगारी को संबोधित करने के लिए अभिनव शैक्षिक दृष्टिकोण की तत्काल आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

शिक्षा में महत्वपूर्ण निवेश और स्नातकों की बढ़ती संख्या के बावजूद भारत उच्च बेरोजगारी दरों से जूझ रहा है। यह विरोधाभासी स्थिति बताती है कि वर्तमान आर्थिक परिदृश्य में सार्थक रोजगार प्राप्त करने के लिए अकेले शैक्षणिक अपर्याप्त हैं। भारत में बेरोजगारी दर लगातार उच्च बनी हुई है। हाल के आंकड़ों के अनुसार यह लगभग 7–8 प्रतिशत है, और शिक्षित युवाओं में यह दर और भी अधिक है। यह आँकड़ा भारत के जनसांख्यिकीय लाभांश को देखते हुए विशेष रूप से चिंताजनक है, जहाँ आबादी का एक बड़ा हिस्सा कामकाजी आयु का है।

इस संभावित कार्यबल का प्रभावी ढंग से उपयोग करने में असमर्थता न केवल व्यक्तिगत आर्थिक प्रगति में बाधा डालती है बल्कि राष्ट्रीय आर्थिक विकास और सामाजिक विकास में भी बाधा डालती है। शिक्षा के परिणामों और उद्योग की आवश्यकताओं के बीच बेमेल के परिणामस्वरूप ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जहाँ व्यवसायों को कुशल श्रमिकों को खोजने में संघर्ष करना पड़ता है जबकि बड़ी संख्या में शिक्षित व्यक्ति बेरोजगार या अल्प–रोजगार में रहते हैं। यह कौशल अंतर अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में स्पष्ट है जो शिक्षा और उद्योग की जरूरतों के बीच अधिक सरेखित दृष्टिकोण की आवश्यकता को उजागर करता है।

इस समस्या की जड़ में भारतीय शिक्षा प्रणाली की संरचना और फोकस है। परंपरागत रूप से, इसने व्यावहारिक कौशल और उद्योग संबंधित दक्षताओं पर सैद्धान्तिक ज्ञान पर जोर दिया है। कई स्नातक खुद को नियोक्ताओं की उभरती मांगों को पूरा करने के लिए अयोग्य पाते हैं, आज के तेजी से विकसित हो

रहे नौकरी बाजार में आवश्यक व्यावहारिक कौशल और अनुकूलनशीलता की कमी है। व्यावसायिक प्रशिक्षण और व्यावहारिक कौशल विकास पर शिक्षा प्रणाली का सीमित ध्यान कई छात्रों को वैश्विक अर्थव्यवस्था में काम की गतिशील प्रकृति के लिए तैयार नहीं करता है।

इसके अलावा, तकनीकी प्रगति की तेज़ गति और काम की बदलती प्रकृति इस चुनौती को और बढ़ा देती है। कई नौकरियों के लिए आवश्यक कौशल पारंपरिक शैक्षिक पाठ्यक्रमों की तुलना में तेज़ी से विकसित हो रहे हैं, जिससे अपस्किलिंग और रीस्किलिंग की निरंतर आवश्यकता पैदा हो रही है। शिक्षा और उद्योग की ज़रूरतों के बीच यह अंतर बढ़ता जा रहा है, जिससे स्नातकों के लिए कार्यबल में सफलतापूर्वक संक्रमण करना मुश्किल होता जा रहा है।

भारत की शिक्षा प्रणाली के विशाल पैमाने और इसके आर्थिक परिदृश्य की विधिता के कारण समस्या और भी जटिल हो जाती हैं हर साल लाखों छात्र नौकरी के बाजार में प्रवेश करते हैं। ऐसे में रोजगार की ओर ले जाने वाली प्रासंगिक, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की चुनौती बहुत बड़ी है। इसके अलावा, शैक्षिक गुणवत्ता और नौक्री के अवसरों में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय असमानताएँ हैं, जो इस मुद्दे को और जटिल बनाती हैं।

समस्या का दूसरा पहलू पारंपरिक शिक्षा मॉडल में उद्यमिता और स्वरोजगार पर जोर न देना है। ऐसे देश में जहाँ रोजगार सृजन एक बड़ी चुनौती है। छात्रों को उद्यमिता के लिए कौशल और मानसिकता से लैस करना समाधान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है। हालाँकि, वर्तमान शिक्षा प्रणाली अक्सर इन उद्यमशीलता कौशल और दृष्टिकोणों को पोषित करने में विफल रहती है।

शिक्षा जगत और उद्योग जगत के बीच का अंतर समस्या का एक और महत्वपूर्ण पहलू है। कई शैक्षणिक संस्थान व्यवसाय जगत से अलग–थलग होकर काम करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पाठ्यक्रम ऐसे होते हैं जो वर्तमान उद्योग जगत की ज़रूरतों को नहीं दर्शाते। सहयोग की इस कमी का मतलब है कि छात्रों को अवसर उनकी शिक्षा के दौरान वास्तविक दुनिया की समस्याओं और परिदृश्यों से अवगत नहीं कराया जाता है, जिससे वे कार्यसथल पर आने वाली चुनौतियों के लिए तैयार नहीं होते हैं।

इसके अलावा यह मान्यता बढ़ती जा रही है कि शिक्षा को न केवल तकनीकी कौशल पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, बल्कि सॉफ्ट स्किल्स और अनुकूलनशीलता विकसित करने पर भी ध्यान देना चाहिए। तेजी से बदलते जॉब मार्केट में ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता होती है जो जल्दी सीख सकें, टीमों में काम कर सकें, प्रभावी ढंग से संवाद कर सकें और जटिल समस्याओं को हल कर सकें। हालाँकि, पारंपरिक शैक्षिक दृष्टिकोणों में इन कौशलों पर अक्सर कम जोर दिया जाता है।

समस्या सांस्कृतिक मूल्यों और नैतिक विचारों के दायरे तक भी फैली हुई है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है जो आधुनिक कौशल को पारंपरिक मूल्यों के साथ संतुलित कर सके, न केवल तकनीकी रूप से कुशल स्नातकों को बढ़ावा दे बल्कि ऐसे सर्वांगीण व्यक्ति तैयार करे जो समाज में सकारात्मक योगदान दे सकें। वर्तमान शिक्षा प्रणाली अक्सर इस संतुलन को हासिल करने के लिए संघर्ष करती है।

अंत में समस्या सामाजिक समानता और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच के व्यापक मुद्दे को शामिल करती है जबकि शिक्षित युवाओं में बेरोजगारी अधिक है, फिर भी आबादी का एक बड़ा हिस्सा ऐसे हैं जो गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल विकास के अवसरों तक पहुँच से वंचित हैं। इससे उन लोगों के लिए शिक्षा की गुणवत्ता और प्रासंगिकता में सुधार करने की दोहरी चुनौती पैदा होती है जिनके पास पहुँच

है और साथ ही उन लोगों तक पहुँच का विस्तार करना है जो वर्तमान में हाशिए पर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. AISHE, 2019 उच्च शिक्षा पर अखिल भारतीय सर्वेक्षण 2018–19 मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
2. ब्लोम. ए.औरसैकी, एच., 2011 भारत में नए स्नातक इंजीनियरों की रोजगार क्षमता और कौशल सेट, विश्व बैंक नीति अनुसंधान कार्य पत्र श्रृंखला।
3. चेनी, जी.आर. रूज़ी, बी.बी. और मुरलीधरन, के., 2005, भारतीय शिक्षा प्रणाली का एक प्रोफ़ाइल, राष्ट्रीय शिक्षा और अर्थव्यवस्था केंद्र।
4. भारत सरकार, 2009 बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, भारत का राजपत्र
5. एम.एच.आर.डी., 2020, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
6. रामचंद्रन, वी. बेतेली, टी. लिंडेन, टी.डे.एस. , गोयल, एस. और गोयल चटर्जी, पी., 2018, सही शिक्षकों को सही स्कूलों में लाना : भारत के शिक्षक कार्यबल का प्रबंधन करना। विश्व बैंक प्रकाशन
7. यूजीसी, 2021, वार्षिक रिपोर्ट 2020–21 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली।
8. हैनसेन, टी.बी., 1999, द सैफ्रन वेव : डेमोक्रेसी एंड हिंदू नेशनलिज्म इन मॉर्डन इंडिया, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस
9. किरण, आर., 2018 नव–उदारवादी भारत में एकात्म मानववाद पर पुनर्विचार, आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 53 (40), पृ. सं. 33–36
10. माहेश्वरी, एस.आर., 1972, भारत में राजनीतिक विकास, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी